" फ़ख्र मत कर तमाशा-ऐ-जश्न का,
मशक्कत किया हु नर, आज परवान पर.. "
एक साधारण सा दीखने वाला कर्मयोगी अगर बड़े से जनसमूह को एक तरफ लिए जा रहा है, तो मैं मानता हूँ कि, कुछ तो खासियत है इस अनबूझे कर्मयोगी की..!
पुनः विवेचित करता हूँ, यह कहा जा सकता है कि, जनसमूह अगर एक तरफ चले जा रहा है, तो इसमें किसी करिश्माई कर्मयोगी की खासियत नही, बल्कि दशकों से चली आ रही व्यवस्था के प्रति कहीं यह असंतोष तो नही है..?
यह कहने में भी कोई गुरेज़ नही कि, नरेन्द्र भाई जी ने अपनी साफगोई से और एक स्वर्णिम भविष्य को अपने हाथों में लेने का जो सपना बुना है और उनके बढ़ते कदम इस तथ्य की पुष्टि भी करते दिखते है, जनसमूह को एक तरफ मोड़ने में सफल भी हु ए है।
वही सिक्के के दूसरे पहलू की विवेचना से यह भी तो स्पष्ट हो चला है कि, केवल स्वर्णिम भविष्य का सपना ही कारक नही है, जनसमूह के एक ओर बढ़ने का, बल्कि वर्तमान व्यवस्था के आपसी मतभेद-मनभेद-दृष्टि का अभाव-राष्ट्रवाद की शिथिल पड़ती नब्ज़-तुष्टिकरण की ओछी नीति-वैश्विक स्तर पर उपेक्षा-प्रगतिन्मुख परियोजनाओं में कड़े विचारो का अभाव और साथ ही दलगत-जातिगत व्यवस्थाओं के साथ ही वंशानुगत परिवार-वाद में पिसता आज का समाज..!
इतने सारे अवग्रहो-अनग्रहों के साथ आज के राष्ट्र को जरूरत थी, एक नयी व्यवस्था की, जिसका फल-सुफल एक विचारधारा की ओर बढ़ता दीखा।
हाँ, दो-ढाई साल की इस नयी व्यवस्था में उत्सव मनाने को अगर बहु त कुछ नही है, तो इतना तो कह ही सकते है कि, राष्ट्र में राष्ट्रवाद की लहर थोड़ी गंभीर तो जरूर हु ई है। यह कह कर मैं यह नही कहना चाहता कि, राष्ट्रवाद अभी ही अवतरित हु आ, पर हाँ, इस विषय को सम्मान मिलने की कवायद तो हु ई ही है।
दशकों से चली आ रही पुरानी व्यवस्था से शिकायत लाज़िमी हो सकती है, पर उससे विरोध हो, यह आवश्यक नही..!
जनसमूह आरम्भ से ही बदलाव की उम्मीद रखता आया है, जिसने भी इस संवेदित नब्ज़ की धड़कनों को सुन लिया, उसी डॉक्टर ने मर्ज़ का इलाज़ भी किया।
थोड़ा पीछे चले, तो ध्यातव्य है कि, आज़ादी की लड़ाई में कई विचारधारा के महापुरुष संलग्न थे। अंग्रेज़ भी दमनकारी नीतिओं से ही भारत को शाषित करना चाहते थे, हमारे क्रान्तिकारी विचारधारा के पूर्वज भी अंग्रेज़ो को उसी दमनकारी नीति से ही अपने देश से भगाना भी चाहते थे, उसी दौरान महात्मा के नए विचार ने एक बड़े जनसमूह को अपनी ओर आकर्षित किया और महात्मा भी विशाल जनसमूह को एक ओर ले जाने में सफल हु ए।
यह कहना सर्वथा अनुचित है कि, केवल महात्मा के शान्ति प्रयासों से ही हमारा राष्ट्र स्वतंत्र हु आ, बल्कि सारे विचारधाराओं के सम्मिलित प्रयासों का प्रतिफल था, हमारी स्वतंत्रता..!
उसी प्रकार आज़ादी के बाद भी विभिन्न विचारधाराओं वाले दलों ने भारत को एक दिशा और दृष्टि देने की कवायद की, पर बदलाव की ईच्छा ने शायद जनसमूह को कुछ और तीव्र गति से या कुछ और पाने की चाहत ने एक और विकल्प खोजने को प्रेरित कर दिया..!
हो सकता है, पिछले दो-ढाई साल के काल में, जनसमूह को कठिनाइयों का सामना भी करना पड़ा हो, पर वैश्विक स्तर पर बढ़ते राष्ट्र-धाक की खुमारी ने हर कठिनाई को दरकिनार करने में सफलता पायी।
वर्तमान व्यवस्था न तो चमत्कारिक है और न ही करिश्माई..!हाँ, स्वर्णिमता की ओर बढ़ते काफिले में यह व्यवस्था अपनी तेज़ गति से बढ़ती जरूर दीखती है।
पूर्व की व्यवस्थाओं को यह सुनिश्चित करना होगा कि, वर्तमान की खामियाँ गिनने और गलतियां खोजने से बेहतर है कि, राष्ट्र को अग्रिम पंक्ति में स्थापित करने के लिए, कुछ ठोस उपाय और कार्यप्रणाली पर मन्थन करे ताकि, जनसमूह

का एक और विश्वास पूर्व पर भी केन्द्रित हो सके..!
इतिहास ने देखा है, जिस किसी ने दूसरे की दुदुम्भी बजायी है, उसका स्थान राज-दरबार में भाँट के ही समकक्ष हुआ है।
जनसमूह को अपने राग में मदमत्त-मन्मत्त करने के लिए तो एक ऐसा राग छेड़ना होगा, जिससे दूसरे की नही, अपनी दृष्टि और दिशा का शंखनाद चतुर्दिक फैले..!
निश्चित रूप से नीति-निर्माता के रूप में व्यवस्था के राष्ट्रीय प्रमुख की भूमिका महती होती है, क्योंकि कर्मयोगी तो निर्धारित नीतियो से ही जनसमूह के उत्थान को प्रशस्त करता होता है..!
पूर्व की व्यवस्थाओं द्वारा अगर सम्यक रूप से कुछ नया और कुछ और भी नया करने की कवायद नही की गयी, तो निश्चित रूप से सारी विचारधाराये एक ही ताबूत में ठोके गये विभिन्न कीलों की तरह ही ताबूत के साथ ही दफन हो जायेंगी।
लोगो की मानसिकता भी अजीब होती है, कष्ट सहकर भी अपने स्वर्णिम कल को पाना चाहते है, चाहे आज कितनी भी बड़ी कुर्बानी क्यों न देनी पड़ी..!
राजनीतिक विषय न तो मेरे समझ में ही आती है और न ही बहुत गहराई तक सोच भी पाता हूँ। बस वर्तमान को विवेचित करने के क्रम में ही, मन महो-महो हुआ तो, कुछ उवाचने की ईच्छा जग गयी..💐😊

-अरूणोदय